A Pratibha Spandan's Journal

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 01, January-June, 2025
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2025

होरी की छटा और माणिक्य राज्यकाल: पूर्वांचल राज्य त्रिपुरा राज-वंश की एक अमिट परंपरा की गाथा

Dr. Tripti Watwe
Assistant Professor and HED, Department of Music, Women's College, Agartala, Tripura

OPEN ACCESS

सार

त्रिपुरा की बात आते ही सहज ही सचिन दा (यशस्वी संगीतकार सचिन देवबर्मन) का नाम स्मृतिपटल पर उभर आता है। किंवदंती सुरों के जादुगर सचिन कर्ता ('कर्ता' एक राजकीय सम्बोधन है जिसे यहाँ की प्रजा राज परिवार से सम्बंधित लोगों के लिए प्रयुक्त करती है)एक राजसी परिवार से सम्बन्ध रखते थे और उनके पहले संगीत गुरु उनके पिता नवद्धीप किशोर देवबर्मन ही थे, जो की महाराज ईशान किशोर बहादुर देवबर्मन के कनिष्ठ पुत्र थे। अर्थात् इस नाते से महाराज ईशानचन्द्र माणिक्य के पौत्र हुए सचिन देबबर्मन जिन्हे प्यार से यहाँ की प्रजा सचिन कर्ता के नाम से भी सम्बोधित करती थी। नवद्धीप किशोर देवबर्मन संगीत के विद्वान और सितार वादन में प्रवीण थे। उन्हें अपने सबसे कनिष्ठ पुत्र सचिन देबबर्मन के साथ विशेष लगाव था और इसी कारण वे युवा सचिन को अपने से दूर पढ़ने तक के लिए नहीं भेजना चाहते थे। जो भी हो महाराज ईशानचन्द्र माणिक्य परम गुरु भक्त और प्रतिबद्ध वैष्णव थे। अपने कार्यकाल में उनके द्वारा स्थापित 'श्रीपाट बाड़ी' की बड़ी महिमा आज भी है क्यूंकि यहीं से त्रिपुरा की उर्वरा धरती पर आध्यात्मिक,सांस्कृतिक , सांगीतिक एवं साहित्यिक परम्पराओं की नींव डाली गयी।

त्रिपुरा का राजपरिवार 'माणिक्य' नाम से परिचित है। पहले इन राजाओं को 'फा ' शब्द से सम्बोधित किया जाता था जो बाद में परिवर्तित होकर 'माणिक्य' हो गया। माणिक्य परंपरा में शुरू से ही संगीत, साहित्य, कला इत्यादि का विशेष स्थान रहा है। इन शासकों ने अपने इस दूर दराज़ राज्य में संस्कृति की स्थापना के लिए हर संभव प्रयत्न किये ताकि यहाँ के रहवासियों को ललित कला के सूक्ष्म सौंदर्य तत्व से अवगत कराया जा सके। प्रस्तुत आलेख में त्रिपुरा के माणिक्य साम्राज्य के शासकों द्वारा प्रचलित 'होरी' गीतों पर एक विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जा रहा है जिसे पढ़कर पाठक बंधू समृद्ध होंगे ऐसी आशा है।

मुख्य शब्द: त्रिपुरा , माणिक्य , होरी गीत , राजपरिवार ,संस्कृति ,श्रीपाट बाड़ी ।

प्रस्तावना

इतिहास साक्षी है कि समय समय पर शासकों और नरपतियों ने अपने राज्य के समुचित विकास के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाये हैं जिनसे उनकी प्रजा उन्हें सदा ससम्मान याद करती है। किन्तु कतिपय ऐसे राजाओं के नाम ही हमने सुने होंगे जो स्वयं असाधारण वाग्येकार , संगीतकार, चित्रकार, साहित्यकार, कवि, फोटोग्राफर हुए होंगे और समाज के समक्ष एक आदर्श राजा की संज्ञा को जिन्होंने सार्थक किया होगा। जो भी हो , राजा यदि अपनी प्रजा की सुरक्षा शत्रुओं से करता हो, बुद्धिमानी से कर वसूलता हो , राज्य में सुशासन बना के रखता हो, आजीविका और पालन पोषण से सम्बंधित आवश्यकताओं को पूर्ण करता हो इत्यादि तो वह एक सुशासक कहलाएगा। परन्तु यदि कोई नरपति अपनी प्रजा को इसके अतिरिक्त सुसंस्कत करने की भी व्यवस्था करता हो , और वह स्वयं भी उस संस्कृति का हिस्सा बनता हो , तो सोने पे सुहागा जैसी बात हो जाएगी । क्यूंकि भौतिक आवश्यकताओं के साथ साथ मनुष्य को मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास की भी ज़रूरत होती है तभी व्यक्तित्व में पूर्णत्व आता है। ऐसी सुधि और सुसंस्कृत जनता ही एक 'स्वस्थ' समाज का निर्माण करती हैही एक 'स्वस्थ' समाज का निर्माण करती है ।

ऐसा ही कुछ त्रिपुरा के माणिक्य शासन-काल में हुआ। माणिक्य शासकों की यही विशेषता थी कि वे स्वयं मिसाल बने अपनी प्रजा के लिए और अपने छोटे से सुदूर राज्य, जिसे पौराणिक युग में 'किरात-भूमि ' के नाम से जाना जाता था, को 'किरात' से 'करामात' भूमि में परिवर्तित कर दिया। त्रिपुरा के राजवंश इतिहास में ऐसी कई घटनाओं का उल्लेख मिलता है जहाँ राजाओं ने पहल कर प्रजा को सुसंस्कृत करने का प्रयास किया। उदाहरणार्थ ग्यारहवीं सदी में त्रिपुरा के महाराज धर्म माणिक्य ने मिथिला से दो विद्वानों को संगीत की शिक्षा के लिए आमंत्रण दिया ताकि सामान्य जनमानस में संगीत के प्रति रूचि पैदा हो सके। महाराज धर्म माणिक्य के कार्यकाल के बाद भी इन भूपतियों ने स्वयं सांगीतिक रचनाओं को रचकर अपनी प्रजा को 'एस्थेटिक क्रिएटिविटी' या सौंदर्यशास्त्र से जुडी हुई रचनात्मकता के लिए प्रेरित किया। संगीतोपयोगी कई पुस्तकों का प्रकाशन भी इन्हीं राजाओं की सहायता से हुआ जिससे ये साबित होता है कि त्रिपुरा की प्रजा इन राजाओं की छत्रछाया में सुसंस्कृत हुई।

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 01, January-June, 2025
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2025

इन तथ्यों को जानते हुए हमें इस बात पर भी ग़ौर करना होगा कि जिस कालावधि की बात अभी हो रही है उस समय त्रिपुरा के अधिकांश स्थानीय रहवासी आदिवासी या ट्राइबल संप्रदाय से आते थे, जिनकी आजीविका का मुख्य साधन शिकार और खेती करना था। बाद के काल खंड में राजाओं की सोची समझी रणनीति के तहत निकटवर्ती एवं अन्य राज्यों जैसे पश्चिम बंग , मणिपुर , उत्तर प्रदेश इत्यादि से धुरंधर विद्वानों , संगीतज्ञों , राजनितिक प्रबंधकों , साहित्यकारों , नीतिविदों इत्यादि को राजाओं ने आमंत्रण देकर बुलाया ताकि यहाँ के स्थानीय निवासी दूसरी संस्कृतियों से भी परिचित हो सके और उन्हें चाहे तो आत्मसात भी कर सके।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय होगा कि त्रिपुरा में उन्नीस जनजातियों का वास है जिनमें जन्मजात सुर और ताल के गुण होते हैं। इन समुदायों का संगीत और नृत्य से अविभाज्य सम्बन्ध है। जीवन का चाहे वह कोई भी प्रसंग हो , यहाँ तक की आजीविका से सम्बंधित खेती , मछलीपालन, इत्यादि हो , चाहे कोई सामाजिक आयोजन जैसे विवाह, इत्यादि हो , इन जनजातियों के जीवन से जुड़ा हर प्रसंग 'संगीत और नृत्य'मय होता है। जूम खेती (एक विशेष तरह की खेती की प्रक्रिया है जिसे त्रिपुरा के पार्वत्य इलाके में रहने वाले कृषक विशेष रूप से करते हैं)को करते समय कृषक अपनी लोक धुनों को ख़ुशी से गाते हैं जिनसे उन्हें खेती के लिए अधिक उत्साह और ऊर्जा मिलती है। लेबांग बुमानी नृत्य एक लोक नृत्य है जिसका प्रचलन भी खेती से ही हुआ है। लेबांग एक तरह का कीड़ा है जो फसल को नुकसान पहुंचता है और 'बुमानी ' याने इस कीड़े को पकड़ने की क्रिया, अर्थात कीड़े को फसल को नुकसान करने से रोकने की प्रक्रिया ने सुंदर लोक नृत्य का रूप ले लिया ।

जहाँ प्रजा स्वाभाविक ही सुर-ताल मई हो और शासक विविध ललित कलाओं में पारदर्शी ही नहीं, व्यक्तिगत रूप से ललित कलाओं में विशेष रूचि और निपुणता रखते हों , ऐसी स्थिति में राज्य की सांगीतिक अवचेतना सुदृढ़ और सशक्त होगी ही, यह अवश्यम्भावी है।

होरी की परंपरा और महाराज बीरचन्द्र माणिक्य

त्रिपुरा के महाराज बीरचन्द्र माणिक्य का राज्यकाल सन् १८६२-१८९६ तक रहा जिसमें त्रिपुरा के आधुनिक युग की नींव डाली गई। औपचारिक शिक्षा न पाकर भी महाराज बीरचन्द्र माणिक्य एक असाधारण गुणी व्यक्ति थे। भाषाओँ में बांग्ला , उर्दू और संस्कृत में समान रूप से उनका अधिकार था। संगीत शास्त्र में पारंगत होने के साथ ही फोटोग्राफी और चित्रकला दोनों ही विधाओं में वे दक्ष थे।

महाराज बीरचन्द्र माणिक्य का वैष्णव साहित्य के प्रति विशेष आकर्षण था। उनके द्वारा ब्रज और बांग्ला भाषा में रचित कीर्तन और भजनों की तो बात ही क्या है, उनकी इन अतुलनीय रचनाओं ने हर किसी को आत्मविभोर किया है । त्रिपुरा में संस्कृति ,साहित्य एवं कला में पुनर्जागरण का वातावरण इसी काल में आरम्भ हुआ जिसका एक महत्वपूर्ण कारन था महाराज बीरचन्द्र का स्वयं संगीतज्ञ , कवि, साहित्यकार और बहुमुखी प्रतिभावान होना। महाराज बीरचन्द्र सभी प्रकार के अवगुणों से रहित थे। न किसी प्रकार के नशे का सेवन न ही अन्य कोई वासना उनमें विद्यमान थी। वे एक समर्पित वैष्णव थे जो कृष्ण -भक्ति में अनुरक्त थे। अपनी कृष्ण भक्ति को उन्होंने काव्य और साहित्य के माध्यम से अनेकों बार अभिव्यक्त किया। उनके द्वारा रचित विविध साहित्यिक कृतियों में प्रमुख हैं 'होरी', 'झूलन गीति' , 'प्रेम मरीचिका ', 'उच्छाश ', 'अकाल कुसुम' और 'सोहाग' ।महाराज बीरचन्द्र की अधिकांश रचनाएं वैष्णव रस में डूबी हुई थीं।

महाराज बीरचन्द्र ऐसे वैष्णव भक्त थे कि जो संगीत, साहित्य रस प्रेमी होते हुए भी , उन सभी वासनाओं जैसे सुरापान इत्यादि वसनों से जो राजाओं में सामान्यतः पाई जाती है, से कोसों दूर रहते थे। उदाहरणार्थ एक बार दोल पूर्णिमा पर लखनऊ से इमामी बाईजी को न्यौता दिया गया था जिसकी जानकारी महाराज बीरचन्द्र को नहीं थी। बाईजी का नृत्य अच्छा होते हुए भी उनकी अंग भंगिमा इत्यादि महाराज को बिलकुल उचित नहीं लगी। परन्तु इसके पश्चात् जब बाईजी ने नृत्य करते हुए महाराज के शुभ्र कपड़ों पर गुलाल रंग फेंका तो महाराज कुपित होकर तुरंत उठे और समारोह से चले गए। उस दिन के बाद त्रिपुरा की राजधानी में बाईजी का नृत्य तो होता था परन्तु महाराज बीरचन्द्र अनुपस्थित रहते थे।

एक और वाकिया महाराज बीरचन्द्र के वैष्णव दर्शन के प्रति अगाध निष्ठा को दर्शाता है। उन दिनों राधारमण घोष थे महाराज के निजी सचिव। घोष बाबू थे पाश्चात्य दर्शन के धुरंधर ज्ञाता। किन्तु बंग भाषा में शास्त्र और भक्ति चर्चा को राधारमण घोष हेय दृष्टि से देखते थे। बस क्या था। महाराज बीरचन्द्र को जब ये बात मालूम पड़ी तो उन्होंने एक नहीं, दो नहीं ,पुरे दस बार , घोष बाबू से 'श्री श्री चैतन्यचरितामृत ' का पाठ करवाया था। वास्तव में घोष बाबू राजकुमारों के शिक्षक थे और पाश्चात्य दर्शन में उन्हें विशेष महारथ हासिल थी, जिसे महाराज बीरचन्द्र भी बहुत सराहते थे । बाद में जब राधा रमन घोष महाराज बीरचन्द्र के निजी सचिव नियुक्त हुए तब महाराज बीरचन्द्र को घोष बाबू की बातों से यह भान हुआ कि वे बंग

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 01, January-June, 2025
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2025

दर्शन को कम करके आंकते हैं। तब महाराज के अनुरोध पर वैष्णव दर्शन का पुनः पुनः अध्ययन करने के फलस्वरूप घोष बाबू वैष्णव दर्शन के कायल हो गए थे।

इन सभी घटनाक्रमों से यही विदित होता है कि महाराज बीरचन्द्र एक सच्चे वैष्णव भक्त थे तथा उनके इसी भक्तिमय निर्मल अन्तः करण की वजह से उनकी होरी इत्यादि रचनाओं में भक्तिरस की परोक्ष और अपरोक्ष सभी गूढ़ भावनाओं का सुन्दर संगम देखने को मिलता है।

उनकी रचनाओं में से कुछ उद्धृतियाँ यहाँ पाठकों के निमित्त प्रस्तुत की जा रही है। रासलीला का ध्यान कर प्रभु भक्ति में लीन महाराज बीरचन्द्र लिखते हैं :

"रोशे जोगमोग धनि आध आध हेरि ,
आंचल शोंगे फागु लेई कुंवरि।
हाशि हाशि रसबति मदन तरंगे ,
देयल आबीर रसमय अंगे।
सुचतुर नाह हृदये धरु प्यारी ,
मुचकी मुचकी हाशि हेरत गोरी। "

झूलन गीति में एक जगह श्री राधा रानी के रूप का वर्णन करते हुए भक्त-कवि बीरचन्द्र लिखते हैं :

"देखरे, जैसे श्याम वैसे प्रिय सुहागिनी रे , देख देख रे ,
मृदु हास्य सुधामय चन्द्रमुखंग।
मधुराधर सुंदर पद्ममुखीं
की दिया तुलीबो दोंहे , तुलना नाइ जगते , देख देख रे। "

महाराज बीरचन्द्र की रचनायें अधिकांशतः विद्यापति, गोविन्द दास इत्यादि प्रख्यात वैष्णव कवियों से प्रेरित थीं। अपने गीतिकाव्यों में अत्यंत मर्मस्पर्शी एवं गूढ़ भक्तिपरक भावनाओं को भी सहज रूप से महाराज अभिव्यक्त करते थे। ज्यादातर रचनायें बृज और बांग्ला भाषा में लिखी गई हैं।

महाराज बीरचन्द्र की इन रचनाओं में हमें दर्शन और भावों का सूंदर संगम देखने को मिलता है। महाराज अपनी रचनाओं को प्रकाशित करने के पूर्णतः विरुद्ध थे अन्यथा इतनी 'यूनिक' कविताओं का प्रकाशन यदि होता तो महाराज को बंग-साहित्य का उच्च सम्मान मिलना अवश्यम्भावी था , ऐसा किसी और का नहीं स्वयं महाराज बीरचन्द्र के कट्टर आलोचक कैलाशचंद्र सिंह महोदय का मानना था। उनके प्रसिद्ध ग्रन्थ ' राजमाला बा त्रिपुरार इतिहास' में उन्होंने महाराज बीरचन्द्र की एक कवि के रूप में भूरी भूरी प्रशंसा की है।

महाराज बीरचन्द्र होली के उत्सव में पूर्णतः हरिप्रेम में मत्त होकर स्वयं झूमकर नाचते हुए अपनी रचनाओं को गाते थे। वैदिक काल में पुराणों इत्यादि धर्मग्रंथों में परम भक्त राजाओं और नरपतियों का उल्लेख मिलता है जैसे महाराज अम्बरीष , महाराज भरत इत्यादि जिन्होंने पृथ्वी का अथाह साम्राज्य और एकछत्र राज होते हुए भी अपने संपूर्ण जीवन को प्रभुभक्ति में लीन कर दिया। महाराज बीरचन्द्र भी ऐसे नरपतिओं का स्मरण दिलाते हैं। कलयुग में ऐसे राजा अविरल ही होंगे जिन्होंने भक्ति का ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया हो।

महाराज बीरचन्द्र के बाद उनकी यशस्वी परंपरा को उनके उत्तराधिकारियों ने सफलता पूर्वक निभाया। महाराज राधाकिशोर, महाराज बीरेंद्र किशोर और महाराज बीर बिक्रम किशोर माणिक्य सभी कलावंत , सुधी ,मर्मज्ञ राजा थे जिन्होंने न केवल होरी गीतों की परंपरा को अक्षुण्ण रखा बल्कि कई विद्वानों और कला पंडितों को अपने राज परिवार की इस परंपरा से जोड़ा जिससे इन होरी गीतों में और अधिक विविधता आयी और सामान्य जनमानस में इसका प्रचलन हुआ। राजाओं के अलावा त्रिपुरा के कुछ उल्लेखनीय संगीतज्ञों ने होरी की इस परंपरा को नयी उचाइयां दिलाई जैसे ठाकुर अनिल कृष्ण देबबर्मन , लेबू करता , अरुण करता इत्यादि ।

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 01, January-June, 2025
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2025

प्रभुबाड़ी: त्रिपुरा के आध्यात्मिक चेतना की गंगोत्री

यहाँ पाठकों के मन में एक विचार आना स्वाभाविक है कि महाराज बीरचन्द्र की वैष्णव भक्ति का स्रोत क्या था? इस प्रश्न का उत्तर त्रिपुरा के गरिमामय इतिहास में ही छुपा हुआ है। दरअसल महाराज बीरचन्द्र के ज्येष्ठ भ्राता महाराज ईशानचन्द्र परम वैष्णव और गुरु भक्त राजा थे। इनके कार्यकाल में ही त्रिपुरा में वैष्णव भक्ति के केंद्र बिंदु स्थल 'प्रभुबाड़ी' की स्थापना हुई जिनमें महाराज ईशानचन्द्र ने अपने गुरु बिपिनबिहारी गोस्वामी को आदरपूर्वक ठहराया और आजीवन उनकी सेवा सुश्रुषा की।

इस वैष्णव संप्रदाय के केंद्र स्थल 'प्रभुबाड़ी' ने विगत दो सौ वर्षों से त्रिपुरा में साहित्य, संस्कृति और कला के संरक्षण एवं विवर्धन का दायित्व सफलता के साथ निभाया है। पहले प्रभुबाड़ी को 'राजगुरु निवास ' के नाम से भी जाना जाता था क्यूंकि यहाँ रहने वाले गोस्वामी-गणों ने त्रिपुरा के राजगुरु का दायित्व भली-भांति कई बार निभाया है। महाराज ईशानचन्द्र परम गुरु-भक्त थे और वित्तीय संकट की घडी में अपने गुरु बिपिनबिहारी गोस्वामी के आदेश पर उन्होंने कुछ दिनों के लिए राज्यभार स्वयं राजगुरु बिपिनबिहारी को सौंप दिया था। उस समय राजगुरु का नाम 'करताप्रभु ' के नाम से विख्यात हो गया था। करताप्रभु दो शब्दों शासनकर्ता से करता और प्रभुपाद के प्रभु के मिश्रण से बना। कहा जाता है कि राजगुरु बिपिनबिहारी गोस्वामी ने अपने कूटनीतिक दक्षता और तीव्र बुद्धिमत्ता से राज्य को वित्तीय संकट से उबारा और महाराज ईशानचन्द्र माणिक्य को राज्यभार पुनः सौंप दिया। यहीं प्रभुबाड़ी के दिव्य परिमंडल में साहित्य, कला, संगीत , कीर्तन , जात्रा, नाटक इत्यादि हर विधा की चर्चा प्रारम्भ हुई जिसके फलस्वरूप प्रभुबाड़ी सांस्कृतिक रूप से भी त्रिपुरा का मध्यबिंदु बन गया।

जो भी हो उपर्युक्त तथ्यों से यह प्रमाणित होता है कि त्रिपुरा के राजाओं में वैष्णव भक्ति और गुरु भक्ति की महान परंपरा रही है। और भक्ति और संस्कृति यहाँ दोनों सहचरी हैं।

उपसंहार

त्रिपुरा के माणिक्य राजाओं ने कला के 'सॉफ्ट पावर ' को पहचान लिया था। होरी गीतों के माध्यम से जनसाधारण के बीच उपस्थित होकर अपने निज निर्मित गीतों को गाकर और भक्ति भाव से भरकर नृत्य करते हुए यहाँ की राजा और प्रजा एक साथ 'दोल पर्व ' पर उल्लास के साथ इस पर्व को मानते थे।

इन माणिक्य शासकों ने अपने अंतर्महल में रानियों को भी इस परंपरा से जुड़ने के लिए प्रोत्साहित किया जिसके फलस्वरूप महारानी तुलसीबती और महारानी प्रभावती देवी जो की क्रमशः महाराज राधा किशोर माणिक्य और महाराज बीरेंद्र किशोर माणिक्य की धर्मपत्नियाँ थीं , ने भी कई भक्तिपरक शास्त्रीय गीतों की रचना की। इसके अलावा महाराजकुमारी बिन्दुबासिनी देवी , इंदिरा देवी , उज्ज्वला देवी , कमलप्रभा देवी इत्यादि ने अपनी सांगीतिक प्रतिभा से सभी को मुग्ध किया।

सन्दर्भ

१. दास , ज्योतिर्मय। राजगुरु श्रीपाट प्रभुबाड़ी : उस्ताद अलाउद्दीन खान थेके मुकुंद दासे र संगीत मजलिश , गांगचिल , कोलकाता ,फेब्रुअरी २०२२
२. रॉय, पन्नालाल। बीरचन्द्र ओ निषिद्ध छबि , सैकत प्रकाशन , अगरतला , फेब्रुअरी २००७
३. देबबर्मन, धबलकृष्ण। संगीताचार्य अनिल कृष्ण ओ उस्ताद अलाउद्दीन खान , चारु प्रेस, कोलकाता, जनवरी २००२
४. गोस्वामी, डॉ. द्विजेन्द्र नारायण। आधुनिक त्रिपुरा : प्रसंग राधाकिशोर माणिक्य , अगरतला ,२००५
५. भट्टाचार्जी , प्रतिब्रत। त्रिपुरा : अ लिविंग म्यूजियम ऑफ़ आर्ट , आर्किटेक्चर एंड कल्चर , नब चंद्र प्रकाशनी , कोलकाता , जनवरी २०११